International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(2): 04-06

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(2): 04-06
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-01-2017
Accepted: 05-02-2017

डॉ. अमित शर्मा
सहायक प्रोफेसर (संस्कृत), यू.सी.डी. एल, सी.डी.एल.यू, सिरसा, हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ. अमित शर्मा
सहायक प्रोफेसर (संस्कृत), यू.सी.डी. एल, सी.डी.एल.यू, सिरसा, हरियाणा, भारत

संस्कृत साहित्य में सौन्दर्य तत्त्व की अवधारणा

डॉ. अमित शर्मा

प्रस्तावना

मानव प्रारम्भ से सौन्दर्य के प्रति स्वाभाविक रूप से आकर्षित रहा है। जीवन एवं सौन्दर्य का परस्पर सम्बन्ध अति घनिष्ठ है। मानव के अतिरिक्त पशु एवं पक्षी भी सौन्दर्यपरक हैं। किसी भी सजीव अथवा निर्जीव वस्तु को देखकर मानव चित्त में जो सुखद अनुभूति प्रस्फुटित होती है उसे ही मानव द्वारा 'सुन्दर' नाम से अभिहित किया गया है। मानव मस्तिष्क एवं चित्त को आह्लादित करने वाली रंग–बिरंगी प्रकृति, कल–कल करती नदियाँ, पर्वत, पशु–पक्षी, पुष्प, लताएँ, किसी स्त्री अथवा अबोध बालक की हास्यपूर्ण मुखाकृति आदि सभी प्रकार की वस्तुएँ उसे सुन्दर प्रतीत होती है। सौन्दर्य के विषय में भारतीय दर्शन में अत्यधिक चिन्तन किया गया है कि वह वस्तुनिष्ठ है अथवा व्यक्तिनिष्ठ। व्यक्तिनिष्ठता से तात्पर्य यह है कि सौन्दर्य के मानक व्यक्ति द्वारा ही निर्धारित किये जाते हैं एवं वस्तुनिष्ठता के अन्तर्गत वस्तु के स्वरूप अथवा आकार में ही सौन्दर्य का अन्वेषण किया जाता है। सम्पूर्णतया यह कहा जा सकता है कि सौन्दर्य मानव मात्र के लिए अनुभव का विषय है। आधुनिक दृष्टि के अनुसार सौन्दर्य के मापदण्ड अवश्य निर्धारित किए गए हैं किन्तु वैदिककाल से वर्तमान पर्यन्त मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, काव्य एवं अलोचना आदि विभिन्न शास्त्रों के अन्तर्गत सौन्दर्यपरक चिन्तन उपलब्ध होता है। वैदिककाल से वर्तमान पर्यन्त सौन्दर्यपरक जो भी चिन्तन उपलब्ध होता है उसके आधार पर ही सौन्दर्य नामक विषय को स्पष्ट किया जा सकता है। केवल आधुनिक सौन्दर्यपरक दृष्टिकोण के आधार पर ही सौन्दर्य के अर्थ को समझना अनुचित होगा।

'सौन्दर्य' शब्द का व्युत्पत्त्यर्थ

सुन्दर शब्द से भावार्थ में ष्यञ् प्रत्यय करने पर सौन्दर्य शब्द निष्पन्न होता है। सुन्दर+ष्यञ् (य) = सौन्दर्य।[1] हलायुधकोश के अनुसार 'सुष्ठु उन्नति आद्री करोति चित्तम्'[2] चित्त को द्रवित करने की क्षमता रखने वाला ही सुन्दर है। वाचस्पत्यम् के अनुसार सु उपसर्ग पूर्वक उन्द धातु से अरन् प्रत्यय करके सुन्दर शब्द निष्पन्न होता है।[3] सु अर्थात् सम्यक् प्रकार से एवं उन्द का अर्थ है गीला अथवा आर्द्र करने वाला। अतः सु+उन्द+अरन् = सुन्दर। इसी प्रकार प्रसन्नता के अर्थ में प्रयुक्त होने वाली नन्द[4] धातु से सु उपसर्ग पूर्वक भी सुन्दर शब्द निष्पन्न होता है। अतः सुन्दर का एक अर्थ यह भी हुआ– जो अच्छी प्रकार से प्रसन्न अथवा आनन्दित करे। शब्दकल्पद्रुम के अनुसार 'सुन्दरस्य भावः सुन्दरत्वम्'।[5] अतः कहा जा सकता है कि चित्त को आह्लादित अथवा प्रसन्न करने का सामर्थ्य जिस तत्त्व विशेष में समाहित हो वही सौन्दर्य है। आकर्षिक वस्तु में सौन्दर्यपरक क्षमता स्वाभाविक रूप से विद्यमान रहती है। अतः जो वस्तु नेत्र एवं श्रवणादि इन्द्रियों के माध्यम से प्रसन्नता का अनुभव कराने में सक्षम हो उसे ही सौन्दर्य परक कहा जा सकता है।

सौन्दर्य शब्द की परिभाषा

भारतवर्ष में सौन्दर्यपरक चिन्तन तो अवश्य हुआ किन्तु सौन्दर्य को एक पूर्ण विकसित शास्त्र के रूप में स्थापित नहीं किया गया। फिर भी भारतीय विद्वानों द्वारा सौन्दर्य शब्द को निज–निज अनुसार परिभाषित किया गया है। कालिदास द्वारा सौन्दर्य को नैसर्गिक माना गया है जिसमें किसी प्रकार के अलङ्करण एवं मण्डन की आवश्यकता नहीं रहती।[6] भामह के अनुसार अलंकार ही सौन्दर्य है।[7] आनन्दवर्धन के द्वारा भी अलंकारों को सौन्दर्य का हेतु कहा गया है।[8] इस प्रकार आनन्दवर्धन, भास, भारवि आदि संस्कृत साहित्य के विद्वानों द्वारा सौन्दर्य को नैसर्गिक कहा गया है। अतः कालिदास का कथन उचित प्रतीत होता है 'स्वभाव सुन्दरं वस्तु न संस्कारमपेक्षते।'[9]

सौन्दर्यतत्त्व का उद्भव तथा विकास

भारतवर्ष ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में मात्र वेद ही ऐसी प्राचीन रचना है जिनसे किसी भी प्रकार के ज्ञान अथवा चिन्तन का उद्भव हुआ है। यद्यपि वेदों में स्पष्टतया सुन्दर एवं सौन्दर्य शब्द का प्रयोग उपलब्ध नहीं होता फिर भी सौन्दर्य के अर्थ का प्रयोग अनेक स्थानों पर हुआ है। ऋग्वेद में 'सुन्दर' शब्द का मूल स्पष्ट रूप से प्राप्त है। ऋग्वेद में 'सुन्दर' शब्द के स्थान पर 'रूप' एवं 'रस' शब्द का प्रयोग अनेक व सौन्दर्य स्थानों पर किया गया है। वैदिक साहित्य में मुख्यतः ऋग्वेद में रूप, शुभ, अप्स, रण्व, मधुर, श्रिय, पेशस, प्रिय, भद्र,[10] बल्गा[11] आदि शब्दों का प्रयोग सौन्दर्य के पर्याय के रूप में किया गया है। पूर्वोक्त सौन्दर्य बोधक शब्द सौन्दर्य के लौकिक, अलौकिक एवं ऐन्द्रिय तथा आत्मिक पक्षों के विषय में बताते हैं। शब्दों के अतिरिक्त अलंकारों के रूप में भी वैदिक साहित्य में सौन्दर्यपरक अर्थ उपलब्ध होते हैं। यथा– कन्येव तन्वा शाशदानां. कृणुषे विभाति।[12] यहाँ उषा को एक रमणी मानकर उसके सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। ऋग्वेद में तो अनेक स्थानों पर सौन्दर्य के विभिन्न पक्षों का वर्णन किया गया है। वैदिक वर्णन के अनुसार सौन्दर्य को मुख्यतः ऐन्द्रिय विषयक माना जा सकता है। वर्ण, कान्ति एवं ऊर्जा सौन्दर्य के प्रमुख तत्त्व हैं। सौन्दर्य को वेदों में प्रीतिकर, उल्लासप्रद, मधुर, चिरनवीन, पवित्र एवं दिव्य कहा गया है।[13] उषा, मरुत, पूषन्, सविता, अग्नि इन सूक्तों में सौन्दर्य वर्णन अपने चरम पर है। इसके अतिरिक्त भी सम्पूर्ण वैदिक साहित्य आध्यात्मिक तथा प्राकृतिक सौन्दर्य से अभिभूत हैं।

वेदान्त कहे जाने वाले उपनिषदों का मुख्य विषय ब्रह्मविद्या है। ब्रह्मस्वरूप, आत्मा, परलोक, उपासना द्वारा निःश्रेयस प्राप्ति, सृष्टि रहस्य आत्मदर्शन आदि विषय उपनिषदों में वर्णित हैं। इस ब्रह्मविद्या के अन्तर्गत ही 'सत्यम्', 'शिवम्' एवं 'सुन्दरम्' की अभिव्यक्ति उस अव्यक्त सत्ता ब्रह्म के रूप में की गई है। उपनिषद् में वर्णित 'सुन्दर रूप' प्रकाश, रस एवं आनन्द का मिश्रण है जिसकी उपमा 'सौर' एवं 'चान्द्र' से उपमित है। उपनिषदों में परमात्मा को सौन्दर्यातिशय युक्त, परम शक्तिवान् कहा गया है जो कि बीज रूप में प्रतिष्ठित है और आनन्द उसी सौन्दर्यवान परमात्मा का प्रकाश है। कला तथा साहित्य के क्षेत्र में उस परमतत्त्व को ही सुन्दर संज्ञा दी गई है। अतः उस परम सुन्दर मनभावन को आनन्द स्वरूप कहा गया है। वस्तुतः सुन्दर का लक्ष्य आनन्द ही है। इस प्रकार उपनिषदों के अन्तर्गत 'आनन्द' को ही सृष्टिप्रक्रिया का आधार बताया गया है।[14]

इस प्रकार सौन्दर्य आनन्द का ही एक रूप है। इस आनन्द से रस उत्पन्न होता है तथा रस को ही ब्रह्म कहा गया है।[15] जहाँ वेदों में सौन्दर्य के दिव्य ऐन्द्रिय तथा आत्मिक एवं लौकिक स्वरूप का वर्णन है वहीं उपनिषदों में वर्णित सौन्दर्य केवल आत्मविद्या पर केन्द्रित है।

पुराणों को सृष्टि, प्रलय, वंश आदि तत्त्वों की विद्या माना जाता है। पुराणों के काव्यशास्त्रीय अध्ययन करने पर उपमा रूप में वर्णित सौन्दर्य को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। 'भागवत–पुराण' इसी सौन्दर्य से ओतप्रोत है। जो कि आनन्द एवं दिव्य माधुर्य प्रदान करता है। जैसा कि भागवत पुराण में वर्णित है– भागवत रूपी फल शुकदेव के मुख के सम्पर्क युक्त होकर अपूर्व आनन्द स्वरूप हो गया।[16] भागवत पुराण में वर्णित कृष्ण का रूप, वर्ण, अङ्गविन्यास, वेशभूषा आदि सौन्दर्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

वाल्मीकि रचित रामायण में सौन्दर्य के सभी रूपों का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। रामायण में एक सम्पूर्ण भाग को 'सुन्दरकाण्ड' की संज्ञा दी गई है। प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ–साथ रामायण में नर–नारी सौन्दर्य, रूप कलागत सौन्दर्य का भी वर्णन किया गया है। रामायण में भी सौन्दर्य के पर्याय शब्दों रमणीय, शोभन, चारू, रूधिर, रम्य आदि का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया गया है यथा– गम्यतां भवता..... रमणीयश्च बहुमूलफलायुतः।[17] उक्त पंक्तियों में कवि द्वारा चित्रकूट पर्वत की रमणीयता का वर्णन किया गया है जो प्राकृतिक सौन्दर्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। प्राकृतिक सौन्दर्य के अन्तर्गत वाल्मीकि द्वारा आकाश, सूर्य, चन्द्र, ऋतुओं आदि का तथा भौतिक सौन्दर्य के निमित्त राजमहल, राजमार्ग आदि का एवं मानवीय सौन्दर्य के अन्तर्गत पुरुष तथा स्त्री के रूप लावण्य का वर्णन किया गया है। 'रामायण' के पश्चात् 'महाभारत' में भी सौन्दर्य वर्णन यत्र–तत्र उपलब्ध होता है। महाभारत में सौन्दर्य के पर्याय रम्य,[18] रुचिर,[19] सुभग,[20] मनोरम,[21] चारु,[22] शोभन,[23] सुरूप,[24] मनोज्ञ[25] आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त 'सुन्दर' शब्द का प्रयोग भी महाभारत में दृष्टिगोचर होता है। यथा– मानुषेष्वपि ... सुन्दरी।[26] रामायण की भाँति महाभारत में भी प्राकृतिक सौन्दर्य, भौतिक सौन्दर्य, मानवीय सौन्दर्य आदि सौन्दर्य के समस्त रूपों का वर्णन किया गया है। सुमेरू पर्वत के विषय में कवि कहता है कि सुमेरू पर्वत सुवर्णमय है जिसकी आभा धूमरहित अग्नि अथवा उदयकालीन सूर्य के समान है।[27] आदिपर्व में नारी सौन्दर्य के अन्तर्गत अम्बा व अम्बालिका का सौन्दर्य वर्णन किया गया है।

उपजीव्य काव्यों के पश्चात् लौकिक संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत सौन्दर्य वर्णन का अत्यन्त परिष्कृत एवं सौन्दर्यपरक कवियों के अन्तर्गत कालिदास श्रेष्ठतम सौन्दर्य कवि माने गए हैं। कालिदास द्वारा सौन्दर्य वर्णन करते समय नितनूतनता, पूर्णता, पराश्रय निरपेक्षता, आकर्षण, आनन्द एवं आध्यात्मिक आदि सौन्दर्य के तत्त्वों का भी उत्कृष्टतापूर्वक प्रयोग किया गया है। कालिदास के अतिरिक्त भारवि, माघ, बाणभट्ट आदि अन्य कवियों ने भी सौन्दर्य के विभिन्न रूपों का वर्णन निज–निज रचनाओं में उत्कृष्टता से किया है।

साहित्यशास्त्र के अन्तर्गत तो विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। यथा– गुण, रीति, अलंकार, ध्वनि, औचित्य एवं रसादि। ये घटक सौन्दर्य विचार एवं काव्यस्वरूप का अंकन करने में सहायक सिद्ध हुए।

इस प्रकार क्रमानुसार वैदिककाल से वर्तमान पर्यन्त संस्कृत साहित्य में सौन्दर्यपरक चिन्तन किसी न किसी रूप में अवश्य देखने को मिलता है। किन्तु पृथक् रूप से इन सौन्दर्यपरक चिन्तन अथवा धारणाओं की शास्त्र के रूप में स्थापना संस्कृत साहित्य में नहीं की गई। पाश्चात्य साहित्य के विद्वानों द्वारा इन सौन्दर्यपरक चिन्तन को सौन्दर्यशास्त्र के रूप में स्थापित किया गया।

अतः कहा जा सकता है कि पाश्चात्य साहित्य की भाँति संस्कृत साहित्य में सौन्दर्य का एक भिन्न शास्त्र के रूप में विकास नहीं हो पाया। परन्तु प्राचीन वैदिककाल से ही भारतीय विद्वानों ने इस 'सौन्दर्य' के रहस्य को समझा तथा अपने अनुसार सौन्दर्यपरक वर्णन किया जो वर्तमान पर्यन्त अनवरत रूप से आधुनिक कवियों द्वारा भी किया जा रहा है। 'सौन्दर्य' नामक तत्त्व में चित्त को आह्लादित एवं प्रभावित करने का सामर्थ्य होता है और सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य ऐसी रचनाओं से भरा पड़ा है जो चित्त को आह्लादित एवं प्रभावित कर सके। अतः कहा जा सकता है कि 'सौन्दर्यशास्त्र' की स्थापना भले ही संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र रूप से न की गई हो किन्तु 'सौन्दर्यशास्त्र' के सिद्धान्तों का विकास वैदिककाल से वर्तमान पर्यन्त संस्कृत साहित्य में होता रहा है।

संदर्भ सूची

1. शब्दकल्पद्रुम, पृष्ठ 424।
2. हलायुधकोश, पृष्ठ 714।
3. वाचस्पत्यम्, पृष्ठ 53।
4. टुनदि समृद्धौ (वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी) भाग–3, पृष्ठ 100।
5. शब्दकल्पद्रुम, पृष्ठ 424।
6. किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्। अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1.20।
7. सौन्दर्यमलंकारः। काव्यालंकार, 1.36।
8. अलङ्कारो हि चारुत्वहेतुरुच्यते। ध्वन्यालोक 2.17।
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कालिदास, अंक 6, पृष्ठ 360।

10. ऋग्वेद, 10.11.3., 7.56.2, 1.80.6.23., 3.61.5.,1.60.3., 1.4.3.7., 61.16., 6.51.1.,4.52.5।
11. अथर्ववेद, 2.36.1।
12. ऋग्वेद, 1.123.10।
13. 'यमी गर्भमृतावृधो ..... पुरुस्पृहम्।' वही, 9.102.6।
14. 'आनन्दो ब्रह्मेति ..... प्रयन्त्यमिविशन्तीति।। तैत्तिरीय उपनिषद्, 3.6.1।
15. रसो वै सः। रसं ह्येवानन्दयति। वही, 2.6.1।
16. शुकमुखादमृतद्रवसंयुक्तम्। भागवत, नवम स्कन्ध।
17. रामायण, 2.54.41।
18. कर्णिकारवनं रम्य .... भीष्मपर्व, 6.24।
19. रुचिस्ते वरोभवेत्। उद्योगपर्व, 100.16।
20. सुभगोदर्शनीयश्च। अनुशासनपर्व, 100.10।
21. .... मनोहरचन्द्रमुखी प्रसन्न्ना। अनुशासनपर्व 11.5।
22. कौतुहलाद् विस्मिचरूनेत्रा। उद्योगपर्व, 11.3।
23. तत्त्वमाख्यहि शोभने। वनपर्व, 123.3।
24. रूपवान् दर्शनीयश्च। उद्योगपर्व, 98.12।
25. मनोज्ञ काननवरे। वनपर्व, 145.45।
26. वनपर्व, 53.14।
27. परिमण्डलस्तयोर्मध्ये ..... इव पावकः। भीष्मपर्व, 6.10।